मंगलसुत्तं

(मंगल-सूत्र)

आचार्य वसुनन्दी मुनि

ग्रंथ	:	मंगलसुत्तं (मंगल-सूत्र)
मंगल आशीर्वाद	:	परम पूज्य श्वेतपिच्छाचार्य श्री 108 विद्यानन्द जी मुनिराज
ग्रंथकार	:	अभीक्षण ज्ञानोपयोगी आचार्य श्री 108 वसुनन्दी जी मुनिराज
संपादन	:	आर्यिका वर्धस्वनंदनी
प्राप्ति स्थान	:	• श्री जम्बूस्वामी तपोस्थली, बोलखेड़ा (कामां) राजस्थान
संस्करण	:	द्वितीय 1000 (सन् 2021)
प्रकाशक	:	निर्ग्रंथ ग्रंथमाला समिति (पंजी.)
मुद्रक	:	पारस प्रकाशन, दिल्ली मो.: 9811374961, 9818394651, 9811363613 pkjainparas@gmail.com, kavijain1982@gmail.com

संपादकीय

ज्ञानाद्धितं वेत्ति ततः प्रवृत्तिं, रत्नत्रये संचित कर्म मोक्षः।
ततस्ततः सौख्यमबाध मुच्चैस्तेनात्रयत्नं विदधाति दक्षः॥

मनुष्य ज्ञान से हित को जानता है, हित का ज्ञान होने से रत्नत्रय में प्रवृत्ति करता है, रत्नत्रय में प्रवृत्ति करने से संचित कर्मों से मोक्ष होता है और संचित कर्मों के मोक्ष से निर्बाध उत्तम सुख की प्राप्ति होती है, इसलिये चतुर मनुष्य ज्ञान में प्रयत्न करते हैं।

भव्य-नराः ज्ञानरथाधिरूढाः, व्रजन्ति शीघ्रं शिवपत्तनञ्च।
अज्ञानिनो मौढ्यरथाधिरूढाः, व्रजन्ति श्वभ्राभिधपत्तनं वै॥

ज्ञान रूपी रथ पर सवार हुए भव्य जीव शीघ्र मोक्षरूपी नगर को प्राप्त होते हैं और मूर्खतारूपी रथ पर सवार हुए अज्ञानी जीव निश्चय से नरकरूपी नगर को प्राप्त होते हैं।

चेतना के क्षितिज पर उदीयमान सम्यग्ज्ञान का आदित्य अज्ञान रूपी तम को तिरोहित कर वस्तु का सम्यक् अवबोध कराने में समर्थ होता है और सम्यग्ज्ञान का यह मिहिर श्रुताभ्यास स्वाध्याय से तेजस्विता को प्राप्त होता है। ''सम्यग्ज्ञान का वह सूर्य कषायों का अवशोषण, भोग रूपी कीटाणुओं का नाश, सम्यगावबोध का प्रकाश फैलाता है।'' स्वाध्याय में निरत व्यक्ति के लिये मोक्ष रूपी दुर्ग तक पहुँचने में बाधक संसार का यह दुर्गम व दुर्लंघ्य सा प्रतीत होने वाला गिरी राईवत् हो जाता है जिससे मोक्ष यात्रा सरल व सुगम हो जाती है।

अतः भव्य जीवों के हितार्थ आचार्य श्री ने मूलभाषा प्राकृत में

ग्रंथों का लेखन किया, जिससे भाषा को जीवंतता भी प्राप्त हो और सद्साहित्य के आलोक से संपूर्ण विश्व प्रकाशित हो सके।

111 गाथाओं में निबद्ध **'मंगलसूत्र'** नामक यह ग्रंथ जीवन को मंगलमय बनाने में उपकारी है। शुभ, प्रशस्त, पवित्र, पुण्यादि मंगल के ही अर्थ हैं। जिस प्रकार क्षीर में मिष्टता हेतु शक्कर का मिश्रण किया जाता है उसी प्रकार जीवन में मंगल व प्रशस्तता के प्रादुर्भाव हेतु यह ग्रंथ शक्कर के समान है। निश्चय, व्यवहार दोनों पहलुओं के साथ इस लघुकाय अनुपम ग्रंथ में कहीं शुद्ध द्रव्यार्थिक नय के आशय से आत्मा ही परमात्मा रूप कथन है तो कहीं व्यवहार से भक्ति-संयम-सम्यग्ज्ञान आदि का सुंदरतम कथन है।

जिणदेव-सुत्त-धम्मा, णिग्गंथो य सम्मत्त-णिमित्तं हु।
दंसणमोहखयादी, अंतर-हेदू सम्मत्तस्स॥6॥

अर्थ–जिनदेव, जिनसूत्र, जिनधर्म, निर्ग्रन्थ मुनि सम्यक्त्व के निमित्त हैं और दर्शन मोहनीय का क्षय आदि निश्चय से सम्यक्त्व का अंतरंग हेतु है।

अभिवादन, ध्यान, पात्र-दान का फल, दीर्घ संसार व मोक्ष का कारण इत्यादि का कथन करते हुये जो उपदेश आचार्य महाराज ने दिया है नि:संदेह वह भव्य प्राणियों के लिये उसी प्रकार तृप्तिदायक है जिस प्रकार मरुथल में तृषित नर को अमृत कुंभ की प्राप्ति हुई हो।

जो को वि भव्वो जहा, जोग्ग-मभिवाददे धम्मी पडि सो।
सुजणेहि होज्ज पुज्जो, अभिवादणं णिप्फलं णेव॥97॥

अर्थ–जो कोई भी भव्य जीव धर्मियों के प्रति यथायोग्य अभिवादन करता है वह सज्जनों के द्वारा पूज्य होता है, अभिवादन कभी निष्फल नहीं होता।

व्यवहार में रहने वाले या निश्चय में पहुँचने के इच्छुक सभी महानुभावों के लिये यह ग्रंथ मणिकांचनयोग के समान है, जो जीवन के सौंदर्य को वृद्धिंगत करने में सहायक होगा। जिस प्रकार सूत्र में मोतियों के पिरोने से एक सुंदर हार का सृजन होता है उसी प्रकार यह ग्रंथ मंगल या प्रशस्त रूपी मोतियों को धारण किए सूत्र के समान है। इस मंगलहार को धारण करने वाला आत्महितार्थी निश्चय ही शीघ्र कल्याण करने में समर्थ होगा।

यदि इस ग्रंथ के संपादन में कोई त्रुटि रह गई हो तो विज्ञजन संशोधित कर पढ़ें, हंसवत् गुणग्राही दृष्टि से ग्रंथाध्ययन करें। जन-जन के श्रद्धापुंज परम पूज्य अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोगी आचार्य गुरुवर श्री वसुनंदी जी मुनिराज का संयम, तप, ज्ञान, साधना का सौरभ सहस्रों वर्षों तक संपूर्ण विश्व को सुरभित करता रहे। गुरुवर श्री को आरोग्य लाभ हो एवं अपने लक्ष्य को शीघ्र प्राप्त करें। परम पूज्य गुरुवर श्री के चरणों में सिद्ध-श्रुत-आचार्य भक्ति सहित कोटिशः नमोस्तु! नमोस्तु! नमोस्तु!.....।।

''जैनम् जयतु शासनम्''

श्री शुभमिति माघ शुक्ल दशमी
श्री वीर निर्वाण संवत् 2547
सोमवार 22.2.2021
श्री जम्बूस्वामी तपोस्थली-बौलखेड़ा,
कामां, भरतपुर (राज.)

आर्यिका वर्धस्वनंदनी

अनुक्रमणिका

मंगलाचरण 11
मोक्ष-पात्र 11
आत्मा स्वयं परमात्मा 12
मोक्ष निमित्त 12
सम्यक्त्व का हेतु 12
जिनोपासना 13
भक्ति से मुक्ति 13
श्रेष्ठ संयम 13
पुण्य फल 14
स्वर्ग सुख मुक्ति हेतु नहीं 14
दर्शनमोहनीय का प्रभाव 14
संसारी कब तक? 15
सम्यग्ज्ञान 15
मिथ्यादृष्टि की प्रवृत्ति 15
रत्नत्रय से मोक्ष 16
व्यवहार-निश्चय सम्यग्दृष्टि 16
व्यवहार व निश्चय नय 16
मूर्ख कौन? 17
ज्ञानी व अज्ञानी 17
पुद्गल-कभी जीव नहीं 18
एकत्व 18
अशरण 18
शरण 19
भवभ्रमण का कारण 19
आस्रवादि के प्रत्यय 19
कर्मबद्धता हेतु 20
अयोग्य कोई नहीं 20
कर्मानुसार फल 20
आत्मघाती कौन? 21
दुःख हेतु 21
कृपण 21
वंचना 22
मोक्षाकांक्षी 22
मनुष्य जन्म वृक्ष के फल 22
भोग सदा दुःखकारी 23
मंगलभूत पुण्य 23
मंगल 23
ज्ञानी व अज्ञानी की प्रवृत्ति 24
भावज्ञानी 24
कर्म नाशक कौन? 24
आत्मभाव भी मंगल 25
मांगल्य कहाँ 25
दुर्ध्यान व सुध्यान 25
कौन किसका धारक? 26
कर्त्ता कौन? 26
आत्म स्वरूप 26
शुद्धात्मा 27
मन की एकाग्रता 27
सेवानुसार फल प्राप्ति 27
जिसकी सेवा उसके गुण 28

परिषह जय 28
राग-द्वेष 28
भव-मोक्ष-कारण 29
मैं कौन हूँ? 29
पर संयोग-भववर्द्धक 29
सुख पथ 30
सदुपयोग से आत्मसिद्धि 30
स्वभाव प्राप्ति 30
उपकारी 31
अन्य नहीं कर्ता व भोक्ता 31
आत्मा ही गुरु-शिष्य 31
कल्याणकारक ज्ञान 32
निमित्त भेद 32
ध्यानादि की प्रवृत्ति कहाँ? 32
स्वभाव का जनक 33
विद्या, धन, शक्ति का फल 33
दुर्लभता 33
दीर्घ संसारी 34
भोग भववर्द्धक 34
स्वानुभूति व विरक्ति 34
क्षान्त व अनघ 35
निजात्म विहार 35
आत्मलीन योगी 35
पात्रदानफल 36
पंडित कौन? 36
आभूषण 36
नरक द्वार 37
आत्मानुभव किसको? 37
आत्मस्थिरता 37
आत्मलीन सदा निर्मल 38
कर्मबंधरहित-ज्ञानी 38
शुद्धात्मलीन 38
विकल्पविहीन 39
द्रव्यादि ग्राहक 39
जहाँ रति वहाँ प्रीति 39
कर्म अबंधक 40
शाश्वत सुख हेतु 40
ध्यान कैसे? 40
रागी शाश्वत दुःखी 41
आत्मानंद 41
शुद्धात्म ध्यान का फल 41
भव्य द्वारा करणीय 42
द्रव्य स्वभाव 42
रत्नत्रय 42
अभिवादन 43
अभिवादन कैसे? 43
अभिवादन भी पूजा 44
समीचीन कार्य से ही मंगल 44
अभ्यास किसका? 44
तत्त्वज्ञानी का सामर्थ्य 45
तीर्थंकर पद योग्य 45
ग्रंथकार की लघुता 46
अंतिम मंगलाचरण 46
प्रशस्ति 47

मंगलसुत्तं

(मंगल-सूत्र)

जीवन में मंगल, प्रशस्तता का अविर्भाव करानेवाले सूत्रों से युक्त, व्यवहार व निश्चय के तटों से युक्त, आध्यात्मिक मंदाकिनी के स्वरूप का परिज्ञान करानेवाला आचार्य श्री द्वारा रचित **'मंगलसूत्र'** नामक यह ग्रंथ अद्भुत है।

मंगलसुत्तं

(मंगल-सूत्र)

मंगलाचरण

मंगलमओ सया जो, सव्व-मंगल-करिदुं सक्को तं।
वीदराय-विण्णाणं, णिच्चं वसु-गुणं पप्पोदुं।।1।।
णासिदाणि कम्माइं, अप्पझाणेण ते जेहि भव्वेहि।
वंदित्तु सवर-हिदाय, मंगलसुत्तं वोच्छामि हं।।2।।

अन्वयार्थ-जो-जो **सया**-सदा **मंगलमओ**-मंगलमय है **सव्व-मंगल-करिदुं**-सर्व मंगल करने में **सक्को**-समर्थ है **तं**-उस **वीदराय-विण्णाणं**-वीतराग विज्ञान व **णिच्चं**-नित्य **वसु-गुणं**-वसु गुण **पप्पोदुं**-प्राप्त करने के लिए **जेहि**-जिन **भव्वेहि**-भव्यों के द्वारा **अप्पझाणेण**-आत्मध्यान से **कम्माइं**-कर्म **णासिदाणि**-नष्ट किए गए हैं **ते**-उनको **वंदित्तु**-वंदन करके **हं**-मैं (आचार्य वसुनंदी मुनि) **सवर-हिदाय**-स्व-पर हित के लिए **मंगलसुत्तं**-'मंगलसूत्र' नामक ग्रंथ को **वोच्छामि**-कहता हूँ।

मोक्ष-पात्र

सम्मत्त-णाण-चरियं, भव्वुल्लो गहेदुं समत्थो जो।
मोक्खं पाविस्सदि सो, अभव्वो ण कया वि णियमेण।।3।।

अन्वयार्थ-जो-जो **भव्वुल्लो**-भव्य जीव **सम्मत्त-णाण-चरियं**-सम्यक्त्व, ज्ञान व चारित्र **गहेदुं**-ग्रहण करने में **समत्थो**-समर्थ है **सो**-वह **णियमेण**-नियम से **मोक्खं**-मोक्ष **पाविस्सदि**-प्राप्त करेगा (किंतु) **अभव्वो**-अभव्य जीव **कया वि**-कभी भी **ण**-नहीं (प्राप्त करेगा)।

आत्मा स्वयं परमात्मा

जह घिदं विज्जदि पये, कट्ठे अग्गी तिलेसु तिल्लं तह।
सिद्धो विज्जदि भव्वे, सुवण्णो य कणय-पासाणे।।4।।

अन्वयार्थ-जह-जिस प्रकार **पये**-दूध में **घिदं**-घी **कट्ठे**-काष्ठ में **अग्गी**-अग्नि **तिलेसु**-तिलों में **तिल्लं**-तेल **य**-और **कणय-पासाणे**-कनक पाषाण में **सुवण्णो**-स्वर्ण **विज्जदि**-विद्यमान है **तह**-उसी प्रकार **भव्वे**-भव्य में **सिद्धो**-सिद्ध **विज्जदि**-विद्यमान है।

मोक्ष निमित्त

होदि कज्जाण सिद्धी, सया णिमित्त-णेमित्तिगबलेणं।
जीवो सिज्झदि सिग्घं, लहिदूणं जोग्ग-दव्वाइं।।5।।

अन्वयार्थ-णिमित्त-णेमित्तिगबलेणं-निमित्त व नैमित्तिक बल से **सया**-सदा **कज्जाण**-कार्यों की **सिद्धी**-सिद्धि **होदि**-होती है **जोग्ग-दव्वाइं**-योग्य द्रव्य आदि को **लहिदूणं**-प्राप्त करके **जीवो**-जीव **सिग्घं**-शीघ्र **सिज्झदि**-सिद्ध होता है।

सम्यक्त्व का हेतु

जिणदेव-सुत्त-धम्मा, णिग्गंथो य सम्मत्त-णिमित्तं हु।
दंसणमोह-खयादी, अंतर-हेदू सम्मत्तस्स।।6।।

अन्वयार्थ-जिणदेव-सुत्त-धम्मा-जिनदेव, जिनसूत्र, जिनधर्म **णिग्गंथो**-निर्ग्रन्थ मुनि **सम्मत्त-णिमित्तं**-सम्यक्त्व के निमित्त हैं **य**-और **दंसणमोह-खयादी**-दर्शन मोहनीय का क्षय आदि **हु**-निश्चय से **सम्मत्तस्स**-सम्यक्त्व का **अंतर-हेदू**-अंतरंग हेतु है।

जिनोपासना

इमेहि विणा ण सक्को, सम्मत्ताइ-अप्पगुणाण गहणं।
उवासेज्ज ताहि सया, जिणदेवाइं हु तियालम्मि।।7।।

अन्वयार्थ-हु-निश्चय से **इमेहि**-इनके **विणा**-बिना **सम्मत्ताइ-अप्पगुणाण**-सम्यक्त्व आदि आत्म गुणों का **गहणं**-ग्रहण करना **सक्को**-शक्य **ण**-नहीं है **ताहि**-इसीलिए **तियालम्मि**-तीनों काल में **जिणदेवाइं**-जिनदेव आदि की **सया उवासेज्ज**-उपासना सदा करनी चाहिए।

भक्ति से मुक्ति

जिणभत्तीए भव्वा, जे मोक्खसुहं लहंति णियमेणं।
किं ण णासेज्ज पावं, ते किं भवसुहं णो लहेज्ज।।8।।

अन्वयार्थ-**जे**-जो **भव्वा**-भव्य जीव **जिणभत्तीए**-जिनभक्ति से **णियमेणं**-नियम से **मोक्खसुहं**-मोक्षसुख **लहंति**-प्राप्त करते हैं तो **किं**-क्या **ते**-वे **पावं**-पाप को **ण णासेज्ज**-नष्ट नहीं कर सकते **किं**-क्या वे **भवसुहं**-भव सुख को **णो लहेज्ज**-प्राप्त नहीं कर सकते।

श्रेष्ठ संयम

भव्वाण वरं लहणं, धरिदूणं संजमं सुग्गदीए।
किण्णु कया वि णो वरं, सह असंजमेण दुग्गदीइ।।9।।

अन्वयार्थ-**भव्वाण**-भव्यों के लिए **संजमं**-संयम को **धरिदूणं**-धारण करके **सुग्गदीए**-सद्गति को **लहणं**-प्राप्त करना **वरं**-श्रेष्ठ है **किण्णु**-किंतु **असंजमेण सह**-असंयम के साथ **दुग्गदीइ**-दुर्गति को प्राप्त करना **कया वि**-कभी भी **वरं**-श्रेष्ठ **णो**-नहीं है।

पुण्य फल

देदि सव्वदा पुण्णं, इंदियसोक्खं देवाइ-सुगदिं च।
णिक्कंखं पुण्णं तह, सिद्ध-पहं कमेण सिद्धिं हु।।10।।

अन्वयार्थ-पुण्णं-पुण्य **सव्वदा**-सर्वदा **इंदिय-सोक्खं**-इंद्रिय सुख **च**-और **देवाइ-सुगदिं**-देवादि सद्गति **देदि**-देता है **तह**-तथा **णिक्कंखं**-नि:कांक्ष **पुण्णं**-पुण्य **हु**-निश्चय से **सिद्ध-पहं**-सिद्ध पथ व **कमेण**-क्रम से **सिद्धिं**-सिद्धि (देता है)।

स्वर्ग सुख मुक्ति हेतु नहीं

सग्गे विज्जदि सोक्खं, णिव्विग्घट्ठं च दिग्घकालंतं।
तं वि णो मुत्ति-हेदू, तत्तो सुहासुहगदिं लहदि।।11।।

अन्वयार्थ-सग्गे-स्वर्ग में **दिग्घकालंतं**-दीर्घ काल तक **णिव्विग्घट्ठं च**-निर्विघ्न और इष्ट **सोक्खं**-सुख **विज्जदि**-विद्यमान है **तं**-वह **वि**-भी **मुत्ति-हेदू**-मुक्ति का हेतु **णो**-नहीं है **तत्तो**-इससे **सुहासुहगदिं**-शुभ-अशुभ गति **लहदि**-प्राप्त होती है।

दर्शनमोहनीय का प्रभाव

दंसणमोहोदयेण, मिच्छाइट्ठी होंति अणादीदो।
लहेंति णो ताव को वि, सम्मत्ताइ-गुणा मोक्खं च।।12।।

अन्वयार्थ-दंसणमोहोदयेण-दर्शन मोहनीय कर्म के उदय से जीव **अणादीदो**-अनादिकाल से **मिच्छाइट्ठी**-मिथ्यादृष्टि **होंति**-होते हैं **ताव**-तब तक **को वि**-कोई भी **सम्मत्ताइ-गुणा**-सम्यक्त्व आदि गुण **च**-और **मोक्खं**-मोक्ष **णो लहेंति**-प्राप्त नहीं करते।

संसारी कब तक ?

एगा वि कम्मपयडी, विज्जदे खलु जाव जम्हि जीवम्मि।
हवेदि वि ताव जीवो, सहिदो कम्मेहि संसारी।।13।।

अन्वयार्थ-**खलु**-निश्चय से **जम्हि**-जिस **जीवम्मि**-जीव में **जाव**-जब तक **एगा**-एक **वि**-भी **कम्मपयडी**-कर्म प्रकृति **विज्जदे**-विद्यमान है **ताव**-तब तक **जीवो**-जीव **वि**-भी **कम्मेहि सहिदो**-कर्मों से सहित **संसारी**-संसारी **हवेदि**-होता है।

सम्यग्ज्ञान

हिदमग्ग-संपत्तीइ, जं सक्क-महिद-पविट्टि-परिहारे।
तं खलु सम्मण्णाणं, तेण विणा ण मोक्खो कया वि।।14।।

अन्वयार्थ-**जं**-जो **हिदमग्ग-संपत्तीइ**-हित मार्ग की प्राप्ति और **अहिद-पविट्टि-परिहारे**-अहित प्रवृत्ति के परिहार में **सक्कं**-शक्य है **तं**-वह **खलु**-निश्चय से **सम्मण्णाणं**-सम्यग्ज्ञान है **तेण विणा**-उसके बिना **कया वि**-कभी भी **ण मोक्खो**-मोक्ष नहीं होता।

मिथ्यादृष्टि की प्रवृत्ति

मज्जपो माणुसो जह, णिच्चं कुणदि विवेग-हीण-किरियं।
मिच्छाइट्ठी जीवो, वट्टदि सह अण्णाणेण तह।।15।।

अन्वयार्थ-**जह**-जिस प्रकार **मज्जपो**-मद्यपायी **माणुसो**-मनुष्य **णिच्चं**-नित्य **विवेग-हीण-किरियं**-विवेक हीन क्रिया **कुणदि**-करता है **तह**-उसी प्रकार **मिच्छाइट्ठी**-मिथ्यादृष्टि **जीवो**-जीव **अण्णाणेण**-अज्ञान के **सह**-साथ **वट्टदि**-वर्तन करता है।

रत्नत्रय से मोक्ष

मिच्छत्त-अण्णाणेहि, सह असंजमो विज्जेदि णियमेण।
विणा ण रयणत्तयेण, को वि सक्को सिव-पत्तीए।।16।।

अन्वयार्थ-मिच्छत्त-अण्णाणेहि सह-मिथ्यात्व व अज्ञान के साथ **णियमेण**-नियम से **असंजमो**-असंयम **विज्जेदि**-रहता है **रयणत्तयेण विणा**-रत्नत्रय के बिना **को वि**-कोई भी **सिव-पत्तीए**-मोक्ष प्राप्ति के लिए **ण सक्को**-शक्य नहीं है।

व्यवहार-निश्चय सम्यग्दृष्टि

ववहारेण भासंति, चउत्थ-पंचम-छट्ठ-गुणट्ठाणे।
जीवा सम्मादिट्ठी, अपमत्ताउ णिच्छयणयेण।।17।।

अन्वयार्थ-ववहारेण-व्यवहार से **जीवा**-जीव **चउत्थ-पंचम-छट्ठ-गुणट्ठाणे**-चौथे, पाँचवे व छठे गुणस्थान में **सम्मादिट्ठी**-सम्यग्दृष्टि **भासंति**-भासते हैं **णिच्छयणयेण**-निश्चय नय से **अपमत्ताउ**-अप्रमत्त गुणस्थान से सम्यग्दृष्टि हैं।

व्यवहार व निश्चय नय

भणेदि भेय-विवक्खं, ववहारो जो भासिदो णयो सो।
णिच्छयेण णो भेया, अपमत्तादी सद्दिट्ठी हु।।18।।

अन्वयार्थ-जो-जो **णयो**-नय **भेय-विवक्खं**-भेद विवक्षा को **भणेदि**-कहता है **सो**-वह **ववहारो**-व्यवहार नय **भासिदो**-कहा गया है **णिच्छयेण**-निश्चय से **णो भेया**-कोई भेद नहीं हैं **अपमत्तादी**-अप्रमत्त आदि **हु**-निश्चय से **सद्दिट्ठी**-सम्यक दृष्टि हैं।

मूर्ख कौन ?

मादू पिदू य भादू, भगिणी भज्जा पुत्ती पुत्तादी।
धण-धण्णाइं संगं, जो णियो मणेदि मूढो सो।।19।।

अन्वयार्थ-जो-जो **मादू**-माता **पिदू**-पिता **भादू**-भाई **भगिणी**-बहन **भज्जा**-स्त्री **पुत्ती**-पुत्री **पुत्तादी**-पुत्र आदि **य**-और **धण-धण्णाइं**-धन-धान्यादि **संगं**-परिग्रह को **णियो**-अपना **मणेदि**-मानता है **सो**-वह **मूढो**-मूर्ख है।

भवणं दुग्गं रयणं, सजणं सेवगं कणगं रजदं च।
सामि-मित्त-रज्जाइं, मणदि मूढो सगसरूवोव्व।।20।।

अन्वयार्थ-मूढो-मूर्ख **भवणं**-भवन **दुग्गं**-दुर्ग **रयणं**-रत्न **सजणं**-स्वजन **सेवगं**-सेवक **कणगं**-स्वर्ण **रजदं**-चाँदी **सामि-मित्त-रज्जाइं च**-स्वामी, मित्र और राज्यादि को **सगसरूवोव्व**-अपने स्वरूप के समान **मणदि**-मानता है।

ज्ञानी व अज्ञानी

णियप्पादो इदराणि, चेयणाचेयणत्थाणि लोयम्मि।
मण्णदे परदव्वाणि, णाणी अण्णो य अण्णाणी।।21।।

अन्वयार्थ-लोयम्मि-लोक में **चेयणाचेयणत्थाणि**-चेतन-अचेतन पदार्थ **णियप्पादो**-अपनी आत्मा से **इदराणि**-इतर हैं वे **परदव्वाणि**-परद्रव्य हैं (ऐसा जो) **मण्णदे**-मानता है वह **णाणी**-ज्ञानी है **य**-और **अण्णो**-अन्य **अण्णाणी**-अज्ञानी है।

पुद्गल—कभी जीव नहीं

चउगदीसु विज्जंते, दुक्खाणि लोगे सुहं ण अत्थेसु।
जह अग्गीए जलं ण, जीवो तहा पोग्गले णेव।।22।।

अन्वयार्थ-**चउगदीसु**-चारों गतियों में **दुक्खाणि**-दु:ख **विज्जंते**-विद्यमान है **लोगे**-लोक में **अत्थेसु**-पदार्थों में **सुहं**-सुख **ण**-नहीं है **जह**-जिस प्रकार **अग्गीए**-अग्नि में **जलं**-जल **ण**-नहीं है **तहा**-उसी प्रकार **पोग्गले**-पुद्गल में **जीवो**-जीव **णेव**-नहीं है।

एकत्व

एगो जम्मदि मरदे, पुण्ण-पाव-फलं भुंजदे एगो।
एगो सुहासुहगदिं, कम्मं खयित्ता लहदि सिवं।।23।।

अन्वयार्थ-जीव **एगो**-अकेला **जम्मदि**-जन्म लेता है **मरदे**-मृत्यु को प्राप्त करता है **एगो**-अकेला **पुण्ण-पाव-फलं**-पुण्य-पाप के फल को **भुंजदे**-भोगता है **एगो**-अकेला **सुहासुहगदिं**-शुभ-अशुभ गति को **लहदि**-प्राप्त करता है (और अकेला ही) **कम्मं**-कर्म **खयित्ता**-क्षयकर **सिवं**-मोक्ष प्राप्त करता है।

अशरण

तिक्काले तियलोगे, णो सरणं को वि पोग्गलो कया वि।
इंदो वि णेव सरणं, णो चक्की हरी बलादी वि।।24।।

अन्वयार्थ-**तियलोगे**-तीन लोक में **तिक्काले**-तीन काल में **कया वि**-कभी भी **को वि**-कोई भी **पोग्गलो**-पुद्गल **सरणं**-शरण **णो**-नहीं है **इंदो**-इंद्र **वि**-भी **सरणं**-शरण **णेव**-नहीं है **चक्की**-चक्रवर्ती **हरी**-नारायण **बलादी**-बलभद्र आदि **वि**-भी **णो**-शरण नहीं हैं।

शरण

पंचगुरू जिणधम्मो, सगप्पसरूवो णिम्मलो सुद्धो।
मंगल-सरण-उत्तमा, होज्जा णियमेण इदरं णो।।25।।

अन्वयार्थ-पंचगुरू -पंचगुरु-पंच परमेष्ठी **जिणधम्मो**-जिनधर्म और **णिम्मलो**-निर्मल **सुद्धो**-शुद्ध **सगप्पसरूवो**-निज आत्म स्वरूप **णियमेण**-नियम से **मंगल-सरण-उत्तमा**-मंगल, शरण व उत्तम **होज्जा**-होता है **इदरं णो**-इनके अतिरिक्त कोई नहीं।

भवभ्रमण का कारण

मोहवसेण हि जीवो, लोयम्मि भमदि अणाइयालादो।
रयणत्तय-संजुत्तो, भव्वो छुट्टेदि कम्मत्तो।।26।।

अन्वयार्थ-मोहवसेण-मोह के वशीभूत **हि**-ही **जीवो**-जीव **अणाइयालादो**-अनादिकाल से **लोयम्मि**-लोक में **भमदि**-भ्रमण कर रहा है (और) **रयणत्तय-संजुत्तो**-रत्नत्रय से युक्त **भव्वो**-भव्य **कम्मत्तो**-कर्मों से **छुट्टेदि**-छूट जाता है।

आस्रवादि के प्रत्यय

मिच्छत्ताइ-पच्चया, कारणं णियमेण कम्मासवस्स।
सम्मत्ताइ-पच्चया, कारणं संवर-णिज्जराण।।27।।

अन्वयार्थ-मिच्छत्ताइ-पच्चया-मिथ्यात्व आदि प्रत्यय **णियमेण**-नियम से **कम्मासवस्स**-कर्मास्रव के **कारणं**-कारण (होते हैं और) **सम्मत्ताइ-पच्चया**-सम्यक्त्व आदि प्रत्यय **संवर-णिज्जराण**-संवर व निर्जरा के **कारणं**-कारण हैं।

कर्मबद्धता हेतु

राय-दोस-रज्जूहिं, अणाइयालादु बद्धो कम्मेहि।
विणा रयणत्तयेणं, जीवो लहदि घोर-दुक्खाणि।।28।।

अन्वयार्थ-राय-दोस-रज्जूहिं-राग-द्वेष की रस्सियों के द्वारा **जीवो**-जीव **अणाइयालादु**-अनादिकाल से **कम्मेहि**-कर्मों से **बद्धो**-बद्ध है **रयणत्तयेण विणा**-रत्नत्रय के बिना वह **घोर-दुक्खाणि**-घोर दु:खों को **लहदि**-प्राप्त करता है।

अयोग्य कोई नहीं

को वि अक्खरो णत्थि हु, जो ण समत्थो होदुं बीयभूदं।
गुणहीणो णो रुक्खो, ण अजोग्गो णरो गुणरहिदो।।29।।

अन्वयार्थ-हु-निश्चय से (ऐसा) **को वि**-कोई भी **अक्खरो**-अक्षर **णत्थि**-नहीं है **जो**-जो **बीयभूदं**-बीजभूत **होदुं**-होने में **समत्थो**-समर्थ **ण**-न हो **गुणहीणो**-गुणों से हीन **रुक्खो**-कोई वृक्ष **णो**-नहीं है और **गुणरहिदो**-गुण रहित **अजोग्गो**-अयोग्य कोई **णरो**-नर **ण**-नहीं है।

कर्मानुसार फल

णाणा-गदि-मागमिच्चु, जीवा णिवसंति एग-कुडुंबम्मि।
सग-कम्माणुसारेण, सुहासुहगदिं सिवं लहंति।।30।।

अन्वयार्थ-णाणा-गदिं-नाना गतियों से **आगमिच्चु**-आकर **जीवा**-जीव **एग-कुडुंबम्मि**-एक कुटुंब में **णिवसंति**-निवास करते हैं पुन: **सग-कम्माणुसारेण**-अपने कर्मों के अनुसार **सुहासुहगदिं**-शुभ-अशुभ गति व **सिवं**-मोक्ष **लहंति**-प्राप्त करते हैं।

आत्मघाती कौन ?

घादेदि अण्णजीवं, विसय-कसाय-मोह-अहजुत्तं जो।
सो घाददि सग-अप्पं, लहदि सगभाव-फलं जीवो।।31।।

अन्वयार्थ-जो-जो **विसय-कसाय-मोह-अहजुत्तं**-विषय, कषाय, मोह, पाप से युक्त **अण्णजीवं**-अन्य जीव को **घादेदि**-घातता है **सो**-वह **सग-अप्पं**-अपनी आत्मा का **घाददि**-घात करता है **जीवो**-जीव **सगभाव-फलं**-अपने भावों का ही फल **लहदि**-प्राप्त करता है।

दुःख हेतु

पावुदयेणं जीवा, बहुविहदुक्खाणि लहंति णियमेण।
खयंति ण किंचि पावं, पुणो पुणो सहंति दुक्खाणि।।32।।

अन्वयार्थ-जीवा-जीव **पावुदयेणं**-पाप के उदय से **णियमेण**-नियम से **बहुविहदुक्खाणि**-बहुत प्रकार के दुःखों को **लहंति**-प्राप्त करते हैं (जब तक) **किंचि पावं**-किंचित् पाप भी **ण खयंति**-नष्ट नहीं होते (तब तक) **पुणो-पुणो**-पुनः पुनः **दुक्खाणि**-दुःखों को **सहंति**-सहन करते हैं।

कृपण

किवणा णेव भुंजंति, संगहंति कया देंति दाणं णो।
ताणं धणं विणस्सदि, गच्छंते य दुग्गदिं ते वि।।33।।

अन्वयार्थ-किवणा-कृपण **कया**-कभी (धन का) **णेव भुंजंति**-भोग नहीं करते (कभी) **णो देंति दाणं**-दान नहीं देते **संगहंति**-सदैव संग्रह करते हैं **ताणं**-उनका **धणं**-धन **विणस्सदि**-नष्ट हो जाता है **य**-और **ते**-वे **दुग्गदिं**-दुर्गति **वि**-भी **गच्छंते**-प्राप्त करते हैं।

वंचना

दाएज्ज अम्मि दाणं, जो एतं चिंतिदूण संगहदे।
सो सग-अप्पं वंचदि, पुण्णत्थं कुणदि बहुपावं।।34।।

अन्वयार्थ-अम्मि-मैं **दाणं**-दान **दाएज्ज**-दूँगा **जो**-जो **एतं**-यह **चिंतिदूण**-सोचकर **संगहदे**-(धन का) संग्रह करता है **सो**-वह **सग-अप्पं**-अपनी आत्मा को **वंचदि**-ठगता है **पुण्णत्थं**-पुण्य के लिए **बहुपावं**-बहुत पाप **कुणदि**-करता है।

मोक्षाकांक्षी

जो जिण-पूयं किच्चा, कुव्वदि सया जिणसुत्त-सज्झायं।
णिग्गंथाणं सेवं, पालदि दयं सो सिवकंखी।।35।।

अन्वयार्थ-जो-जो **सया**-सदा **जिणपूयं**-जिनेन्द्र भगवान् की पूजा **किच्चा**-करके **जिणसुत्त-सज्झायं**-जिनसूत्रों का स्वाध्याय **कुव्वदि**-करता है **णिग्गंथाणं**-निर्ग्रन्थों की **सेवं**-सेवा (करता है) **दयं**-दया का **पालदि**-पालन करता है **सो**-वह **सिवकंखी**-मोक्ष का आकांक्षी है।

मनुष्य जन्म वृक्ष के फल

जिणपूया सज्झायो, तित्थवंदणा दया पत्तदाणं।
जवो तवो संजमो हु, गुरुसेवा णररुक्खफलाणि।।36।।

अन्वयार्थ-जिणपूया-जिनपूजा **सज्झायो**-स्वाध्याय **पत्तदाणं**-पात्र दान **तित्थवंदणा**-तीर्थवंदना **दया**-दया **जवो**-जप **तवो**-तप **संजमो** संयम और **गुरूसेवा**-गुरूसेवा **हु**-निश्चय से **णररुक्खफलाणि**-मनुष्य जन्म रूपी वृक्ष के फल हैं।

भोग सदा दुःखकारी

पुव्वम्मि देदि दुक्खं, संगहमाणो वि धणं बहुदुक्खं।
भुंजंतो अवि दुक्खं, छड्डंतो य घोरदुक्खाणि।।37।।

अन्वयार्थ-धणं-धन **पुव्वम्मि**-पूर्व में **वि**-भी **दुक्खं**-दुःख **देदि**-देता है **संगहमाणो**-संग्रह करते हुए भी **बहुदुक्खं**-बहुत दुःख देता है **भुंजंतो**-भोगते हुए **अवि**-भी **दुक्खं**-दुःख (देता है) **य**-और **छड्डंतो**-छोड़ते हुए भी **घोरदुक्खाणि**-घोर दुःखों को देता है।

मंगलभूत पुण्य

पुण्णं मंगलभूदं, भवसुहकंखरहिद-मप्पलद्धीइ।
पावं होदि सव्वदा, भव-दुह-कारणं णियमेणं।।38।।

अन्वयार्थ-अप्पलद्धीइ-आत्मोपलब्धि के लिए **भवसुह-कंख-रहिदं**-संसार सुख और कांक्षा से रहित **पुण्णं**-पुण्य **मंगलभूदं**-मंगलभूत है **पावं**-पाप **णियमेणं**-नियम से **सव्वदा**-सर्वदा **भव-दुह-कारणं**-सांसारिक दुःख का कारण **होदि**-होता है।

मंगल

अघं गालिदुं सक्कं, सिव-सुहं देदुं पहाण-हेदू वि।
पाव-मल-परिहारगं, अप्पसुह-कारणं मंगलं।।39।।

अन्वयार्थ-अघं-पाप को **गालिदुं**-गलाने में **सक्कं**-समर्थ **सिव-सुहं**-मोक्ष सुख को **देदुं**-देने में **वि**-भी **पहाण-हेदू**-प्रधान हेतु **पाव-मल-परिहारगं**-पाप रूप मल का परिहारक और **अप्पसुह-कारणं**-आत्म सुख का कारण **मंगलं**-मंगल कहा गया है।

ज्ञानी व अज्ञानी की प्रवृत्ति

जीवत्थं खादंते, केइ खादत्थं लोगे जीवंति।
कमसो ताण मणेज्जा, णाणी इदरं पवट्टीए।।40।।

अन्वयार्थ-लोगे-लोक में **केइ**-कुछ लोग **जीवत्थं**-जीने के लिए **खादंते**-खाते हैं (कुछ) **खादत्थं**-खाने के लिए **जीवंति**-जीते हैं **ताण**-उनकी **पवट्टीए**-प्रवृत्ति से **कमसो**-क्रमशः उन्हें **णाणी**-ज्ञानी व **इदरं**-इतर अर्थात् अज्ञानी **मणेज्जा**-मानना चाहिए।

भावज्ञानी

जाणंते सद्देहिं, केइ जीवा जाणंति भावेहिं।
भाव-णाण-जुत्ता जे, अइर लहंति ते मोक्ख-सुहं।।41।।

अन्वयार्थ-केइ-कितने ही **जीवा**-जीव **सद्देहिं**-शब्दों के द्वारा **जाणंते**-जानते हैं (कितने ही) **भावेहिं**-भावों के द्वारा **जाणंति**-जानते हैं **जे**-जो **भाव-णाण-जुत्ता**-भाव-ज्ञान से युक्त हैं **ते**-वे **अइर**-शीघ्र **मोक्खसुहं**-मोक्ष सुख **लहंति**-प्राप्त करते हैं।

कर्म नाशक कौन?

सयल-संजम-जुत्तो य, कसायणिग्गह-समत्तभावेणं।
रयणत्तयेण सहिदो, अप्प-झाणी खवदि कम्माणि।।42।।

अन्वयार्थ-सयल-संजम-जुत्तो-सकल संयम से संयुक्त **कसायणिग्गह-समत्तभावेणं**-कषाय निग्रह, समत्व भाव **य**-व **रयणत्तयेण**-रत्नत्रय से **सहिदो**-सहित **अप्पझाणी**-आत्मध्यानी **कम्माणि**-कर्मों को **खवदि**-नष्ट करता है।

आत्मभाव भी मंगल

मंगलभूद-दव्वाणि, लोयम्मि विज्जंति जत्थ कत्थ खलु।
होंति मंगलरूवाणि, अप्पभावो वि मंगलमेव।।43।।

अन्वयार्थ-**लोयम्मि**-लोक में **जत्थ**-जहाँ **कत्थ**-कहीं **मंगलभूद-दव्वाणि**-मंगलभूत द्रव्य **विज्जंति**-विद्यमान हैं वे **खलु**-निश्चय से **मंगलरूवाणि**-मंगलरूप **होंति**-होते हैं **अप्पभावो**-आत्म भाव **वि**-भी **मंगलं**-मंगल **एव**-ही है।

मांगल्य कहाँ

जिणवरो जिणधम्मो य, णिग्गंथो जिणसमयो मंगलं हु।
णिरंजण-सव्वसिद्धा, मंगलं धम्म-सुक्क-झाणं।।44।।

अन्वयार्थ-**हु**-निश्चय से **जिणवरो**-जिनेंद्र देव **जिणधम्मो**-जिनधर्म **णिग्गंथो**-निर्ग्रंथ मुनि **जिणसमयो**-जिनशासन **मंगलं**-मंगल है **णिरंजण-सव्वसिद्धा**-निरंजन सर्व सिद्ध (मंगल हैं) **धम्म-सुक्क-झाणं य**-धर्म ध्यान और शुक्ल ध्यान **मंगलं**-मंगल हैं।

दुर्ध्यान व सुध्यान

कंटगोव्व दुज्झाणं, चिंतामणीव धम्म-सुक्काइं च।
सग-णियडि-अणुसारेण, जीवा लहंति फलाणि सया।।45।।

अन्वयार्थ-**दुज्झाणं**-दुर्ध्यान **कंटगोव्व**-काँटे के समान है (तथा) **धम्म-सुक्काइं च**-धर्म व शुक्ल ध्यान **चिंतामणीव**-चिंतामणि रत्न के समान है **सग-णियडि-अणुसारेण**-अपनी नियति के अनुसार **जीवा**-जीव **सया**-सदा **फलाणि**-फलों को **लहंति**-प्राप्त करते हैं।

कौन किसका धारक ?

णाणी धरदि खमादिं, कोहादि-भावं धरदि अण्णाणी।
णाणी लहेदि मुत्तिं, अण्णाणी अणंत-दुक्खाणि।।46।।

अन्वयार्थ-णाणी-ज्ञानी **खमादिं**-क्षमादि गुणों को **धरदि**-धारण करता है **अण्णाणी**-अज्ञानी **कोहादि-भावं**-क्रोधादि भाव **धरदि**-धारण करता है **णाणी**-ज्ञानी **मुत्तिं**-मुक्ति **लहेदि**-प्राप्त करता है व **अण्णाणी**-अज्ञानी **अणंत-दुक्खाणि**-अनंत दु:खों को।

कर्त्ता कौन ?

कत्तू परवत्थूणं, मणदे जो अण्णाणी जिणसमये।
अप्पप्पस्स कत्तू हि, सो मणदे खवेदि कम्माणि।।47।।

अन्वयार्थ-मैं **परवत्थूणं**-पर वस्तुओं का **कत्तू**-कर्त्ता हूँ **जो**-जो ऐसा **मणदे**-मानता है **सो**-वह **जिणसमये**-जिनशासन में **अण्णाणी**-अज्ञानी है **अप्पा**-आत्मा **हि**-ही **अप्पस्स**-आत्मा का **कत्तू**-कर्त्ता है (जो ऐसा) **मणदे**-मानता है (वह) **कम्माणि**-कर्मों को **खवेदि**-नष्ट करता है।

आत्म स्वरूप

सग-संवेदण-जोग्गो, मणेण अगम्मो इंदियातीदो।
तहा देह-परिमाणो, अप्पा सिद्धोव्व सहावेण।।48।।

अन्वयार्थ-सग-संवेदण-जोग्गो-स्व संवेदन योग्य **मणेण**-मन के **अगम्मो**-अगम्य **इंदियातीदो**-इंद्रियातीत **तहा**-तथा **देह-परिमाणो**-देह परिमाण मात्र **अप्पा**-आत्मा **सहावेण**-स्वभाव से **सिद्धोव्व**-सिद्धों के समान है।

शुद्धात्मा

अमुत्ती अणंत-णाण-दंसण-सुह-सत्ति-जुदो सहावेण।
तिविह-कम्म-विहीणोय, णिच्छय-पाण-जुद-सुद्धप्पा।।49।।

अन्वयार्थ-सुद्धप्पा-शुद्धात्मा **सहावेण**-स्वभाव से **अमुत्ती**-अमूर्तिक **अणंत-णाण-दंसण-सुह-सत्ति-जुदो**-अनंत ज्ञान, दर्शन, सुख, शक्ति से युक्त **तिविह-कम्मविहीणो**-तीनों प्रकार के कर्मों से विहीन **य**-व **णिच्छय-पाण-जुदो**-निश्चय प्राण से युक्त होता है।

मन की एकाग्रता

अक्ख-णिग्गहं किच्चा, मणं एगग्गो सया कुव्वदि जो।
लहदि सो अप्प-झाणं, संवरं च णिज्जरं तवेण।।50।।

अन्वयार्थ-अक्ख-णिग्गहं-इंद्रिय निग्रह **किच्चा**-करके **जो**-जो **सया**-सदा **मणं**-मन को **एगग्गो**-एकाग्र **कुव्वदि**-करता है **सो**-वह **अप्प-झाणं**-आत्मध्यान को **लहदि**-प्राप्त करता है **च**-और **तवेण**-तप से **संवरं**-संवर व **णिज्जरं**-निर्जरा को भी।

सेवानुसार फल प्राप्ति

जो सेवदि अण्णाणिं, अण्णाणेण सह लहेदि दुक्खाणि।
सेवदि केवलणाणिं, केवलणाणं च लहेदि सो।।51।।

अन्वयार्थ-जो-जो **अण्णाणिं**-अज्ञानी की **सेवदि**-सेवा करता है **सो**-वह **अण्णाणेण**-अज्ञान के **सह**-साथ **दुक्खाणि**-दु:खों को **लहेदि**-प्राप्त करता है **च**-और जो **केवलणाणिं**-केवलज्ञानी की **सेवदि**-सेवा-आराधना करता है वह **केवलणाणं**-केवलज्ञान **लहेदि**-प्राप्त करता है।

जिसकी सेवा उसके गुण

सुसंजमी हु सेवदे, जो सो लहदि गुणा णिम्मला ताण।
जो होज्ज दाएज्ज तं, असंजमो असंजमेणं हि।।52।।

अन्वयार्थ-**हु**-निश्चय से **जो**-जो **सुसंजमी**-सुसंयमियों की **सेवदे**-सेवा करता है **सो**-वह **ताण**-उनके **णिम्मला**-निर्मल **गुणा**-गुणों को **लहदि**-प्राप्त करता है (जिसके पास) **जो**-जो **होज्ज**-होता है वह **तं**-वही **दाएज्ज**-देता है **असंजमेणं**-असंयम से **असंजमो**-असंयम **हि**-ही (प्राप्त होता है)।

परिषह जय

परिसहजयेण साहू, णिरुंभंते असुहासवं बंधं।
लहंति संवरमुहयं, अविवाग-णिज्जरं मोक्खं च।।53।।

अन्वयार्थ-**साहू**-साधु **परिसहजयेण**-परिषह जय द्वारा **असुहासवं**-अशुभ आस्रव व **बंधं**-बंध का **णिरुंभंते**-निरोध करते हैं **उहयं**-उभय (द्रव्य व भाव) **संवरं**-संवर **अविवाग-णिज्जरं**-अविपाक निर्जरा **च**-और **मोक्खं**-मोक्ष **लहंति**-प्राप्त करते हैं।

राग-द्वेष

रायी बंधदि कम्मं, विरागो छुट्टदि सव्व-कम्मादो।
रायो भवस्स हेदू, जत्थ रायो तत्थ दोसो वि।।54।।

अन्वयार्थ-**रायी**-रागी जीव **कम्मं**-कर्म **बंधदि**-बांधता है **विरागो**-विरागी जीव **सव्व-कम्मादो**-सभी कर्मों से **छुट्टदि**-छूटता है **रायो**-राग **भवस्स**-संसार का **हेदू**-हेतु है **जत्थ**-जहाँ **रायो**-राग है **तत्थ**-वहाँ **दोसो**-द्वेष **वि**-भी है।

भव-मोक्ष-कारण

मिच्छत्ताइ-कम्माणि, होंति कारणं भवस्स णियमेणं।
हेदू मोक्खस्स होज्ज, तह सम्मत्ताइ-अप्पगुणा।।55।।

अन्वयार्थ-मिच्छत्ताइ-कम्माणि-मिथ्यात्वादि कर्म **णियमेणं**-नियम से **भवस्स**-संसार के **कारणं**-कारण **होंति**-होते हैं **तह**-तथा **सम्मत्ताइ-अप्पगुणा**-सम्यक्त्व आदि आत्मगुण **मोक्खस्स**-मोक्ष के **हेदू**-हेतु **होज्ज**-होते हैं।

मैं कौन हूँ ?

एगो हि हं णिम्मलो, णाण-दंसण-जुत्तो य सुद्धप्पा।
परूवंति जिणदेवा, परदव्वं संजोगमेत्तं।।56।।

अन्वयार्थ-हं-मैं **एगो**-एक **हि**-ही **णिम्मलो**-निर्मल **य**-और **णाण-दंसण-जुत्तो**-ज्ञान, दर्शन से युक्त **सुद्धप्पा**-शुद्धात्मा हूँ **परदव्वं**-परद्रव्य **संजोगमेत्तं**-संयोग मात्र है (ऐसा) **जिणदेवा**-जिनेंद्र देव **परूवंति**-प्ररूपित करते हैं।

पर संयोग-भववर्द्धक

परदव्व-संजोओ वि, णियमेणं वड्ढगो भवस्स होदि।
उज्झेज्ज तिजोगेहिं, तम्हा खलु सव्व-संजोआ।।57।।

अन्वयार्थ-परदव्व-संजोओ-परद्रव्यों का संयोग **वि**-भी **णियमेणं**-नियम से **भवस्स**-भव **वड्ढगो**-वर्द्धक **होदि**-होता है **तम्हा**-इसीलिए **तिजोगेहिं**-तीनों योगों से **सव्व-संजोआ**-सभी संयोगों का **खलु**-निश्चय से **उज्झेज्ज**-त्याग करना चाहिए।

सुख पथ

सम्मग-सद्धा-जुत्तं, विवेगेण जो करेदि आयरणं।
आयरणं सुह-मग्गो, तं विणा सुहं असंभवोत्थि।।58।।

अन्वयार्थ-जो-जो **विवेगेण**-विवेक से **सम्मग-सद्धा-जुत्तं**-सम्यक् श्रद्धा से युक्त **आयरणं**-आचरण **करेदि**-करता है (उसका वह) **आयरणं**-आचरण **सुह-मग्गो**-सुख का मार्ग है **तं विणा**-उसके बिना **सुहं**-सुख **असंभवोत्थि**-असंभव है।

सदुपयोग से आत्मसिद्धि

अणुऊल-सत्ति-समयं, सण्णाणं साहणं पाविदूणं।
सव्वा उवउंजदि जो, लहदे सग-अप्पसिद्धिं सो।।59।।

अन्वयार्थ-अणुऊल-सत्ति-समयं-अनुकूल शक्ति, समय **सण्णाणं**-सम्यक्ज्ञान व **साहणं**-साधन **पाविदूणं**-प्राप्त करके **जो**-जो **सव्वा**-सबका **उवउंजदि**-सदुपयोग करता है **सो**-वह **सग-अप्प-सिद्धिं**-निजात्म सिद्धि को **लहदे**-प्राप्त करता है।

स्वभाव प्राप्ति

भोच्चा सव्वपोग्गलं, किच्चु पज्जयरूवमणंतवारं।
णो पाविदो सहावो, होज्ज सय सगप्पे सहावो।।60।।

अन्वयार्थ-सव्वपोग्गलं-सर्व पुद्गल को **अणंतवारं**-अनंतबार **भोच्चा**-भोगकर (अनंत) **पज्जयरूवं**-पर्याय रूप **किच्चु**-करके (भी जीव के द्वारा) **सहावो**-स्वभाव **णो-पाविदो**-प्राप्त नहीं किया गया **सहावो**-स्वभाव **सय**-सदा **सगप्पे**-निज आत्मा में **होज्ज**-होता है।

उपकारी

पोग्गलो लोगम्मि खलु, णिज्जुंजदि सया पोग्गलं दव्वं।
जीवो जीवं वि तहा, जादि-विरोही होदि ण को वि।।61।।

अन्वयार्थ-लोगे-लोक में **पोग्गलो**-पुद्गल **सया**-सदा **पोग्गलं-दव्वं**-पुद्गल द्रव्य का **णिज्जुंजदि**-उपकार करता है **तहा**-व उसी प्रकार **जीवो**-जीव **वि**-भी **जीवं**-जीव का (उपकार करता है) **खलु**-निश्चय से **को वि**-कोई भी अपनी **जादि-विरोही**-जाति का विरोधी **ण**-नहीं **होदि**-होता।

अन्य नहीं कर्ता व भोक्ता

हं मज्झं खलु कत्तू, भोत्तू णियमेण वि सग-कम्माणं।
को वि कया वि होदि णो, कम्म-भोत्तू कस्स अण्णस्स।।62।।

अन्वयार्थ-खलु-निश्चय से **हं**-मैं **मज्झं**-मेरा **कत्तू**-कर्त्ता हूँ **सग-कम्माणं**-स्वकर्मों का **णियमेण**-नियम से **भोत्तू**-भोक्ता **वि**-भी हूँ **को वि**-कोई भी **कया वि**-कभी भी **कस्स**-किसी **अण्णस्स**-अन्य के **कम्म-भोत्तू**-कर्मों का भोक्ता **णो**-नहीं **होदि**-होता।

आत्मा ही गुरु-शिष्य

अम्मि खलु सग-सिस्सो य, णियस्स गुरू णियमेण सया अम्मि।
जइ ममप्पा ण सक्को, सिस्स-गुरु-होदुं मोक्खो णो।।63।।

अन्वयार्थ-खलु-निश्चय से **अम्मि**-मैं **सया**-सदा **सग-सिस्सो**-अपना शिष्य हूँ **अम्मि**-मैं **णियमेण**-नियम से **णियस्स**-निज का **गुरू**-गुरु हूँ **य**-और **जइ**-यदि **मम**-मेरी **अप्पा**-आत्मा ही मेरी **सिस्स-गुरु-होदुं**-शिष्य, गुरु होने में **ण-सक्को**-समर्थ नहीं है तो **मोक्खो णो**-मेरा मोक्ष भी संभव नहीं है।

कल्याणकारक ज्ञान

चक्खुं विणा ण सक्को, वत्थु-पस्सिदुं जह को वि पयासो।
मे णाणेण विणा तह, णो को वि हु करेदुं सेयं।।64।।

अन्वयार्थ-**जह**-जिस प्रकार **चक्खुं विणा**-मेरे नेत्र के बिना **को वि**-कोई भी **पयासो**-प्रकाश **वत्थु-पस्सिदुं**-वस्तु देखने में **सक्को**-समर्थ **ण**-नहीं है **तह**-उसी प्रकार **हु**-निश्चय से **मे**-मेरे **णाणेण**-ज्ञान के **विणा**-बिना **को वि**-कोई भी मेरा **सेयं**-कल्याण **करेदुं**-करने में (समर्थ) **णो**-नहीं है।

निमित्त भेद

तिविह-णिमित्तं भणिदं, पेरगुदासीणमदिउदासीणं।
अप्पभावो जिणादी, तह कमसो धम्मदव्वादी।।65।।

अन्वयार्थ-**तिविह-णिमित्तं**-निमित्त तीन प्रकार के **भणिदं**-कहे गए हैं **पेरग-उदासीणं**-प्रेरक, उदासीन **अदि-उदासीणं**-अति उदासीन **अप्पभावो**-आत्म भाव **जिणादी**-जिनदेव आदि **तह**-तथा **धम्मदव्वादी**-धर्मद्रव्यादि **कमसो**-क्रमशः (तीन प्रकार के निमित्त हैं)।

ध्यानादि की प्रवृत्ति कहाँ ?

जस्स चित्तं हु खुहिदं, णो तस्स धम्मसुक्कादि-पवट्टी।
हवेदि संतचित्तम्मि, सेयत्थं तवादि-पवट्टी।।66।।

अन्वयार्थ-**हु**-निश्चय से **जस्स**-जिसका **चित्तं**-चित्त **खुहिदं**-क्षुभित है **तस्स**-उसकी **धम्म-सुक्कादि-पवट्टी**-धर्म, शुक्ल ध्यान आदि की प्रवृत्ति **णो**-नहीं है **संतचित्तम्मि**-शांत चित्त में **सेयत्थं**-कल्याण के लिए **तवादि-पवट्टी**-तप आदि प्रवृत्ति **हवेदि**-होती है।

स्वभाव का जनक

जोगी जो एगंते, संकुचदि अक्खं णिरुंभदि चित्तं।
सो लहदि परमझाणं, सहाव-जणग-णिच्छय-धम्मो।।67।।

अन्वयार्थ-जो-जो **जोगी**-योगी **एगंते**-एकांत में **अक्खं**-इंद्रिय **संकुचदि**-संकुचित करता है **चित्तं**-चित्त का **णिरुंभदि**-निरोध करता है **सो**-वह **परमझाणं**-परम ध्यान को **लहदि**-प्राप्त करता है **सहाव-जणग-णिच्छय-धम्मो**-निश्चय धर्म स्वभाव का जनक है।

विद्या, धन, शक्ति का फल

विज्जा धणं च सत्ती, सेट्ठुजणाण णाण-दाण-रक्खाण।
विवादत्थं मदत्थं, दुट्ठाणं परपीडणत्थं।।68।।

अन्वयार्थ-सेट्ठुजणाण-श्रेष्ठ लोगों की **विज्जा**-विद्या **धणं**-धन **च**-और **सत्ती**-शक्ति **णाण-दाण-रक्खाण**-ज्ञान, दान व रक्षा के लिए होती है (जबकि) **दुट्ठाणं**-दुष्टों की **विवादत्थं**-विवाद **मदत्थं**-अहंकार **परपीडणत्थं**-दूसरों को पीड़ा पहुँचाने के लिए होती है।

दुर्लभता

दुल्लह-तस-पज्जायो, पंचिंदियो कम्मभूमिज-णरो वि।
गुरु-किवा य सद्दिट्ठी, विसय-चागो उहय-बोही हु।।69।।

अन्वयार्थ-हु-निश्चय से **दुल्लह-तस-पज्जायो**-त्रस पर्याय दुर्लभ है **पंचिंदियो**-पंचेंद्रिय **कम्मभूमिज-णरो**-कर्मभूमि का मनुष्य होना दुर्लभ है **गुरु-किवा**-गुरु कृपा **सद्दिट्ठी**-सम्यग्दृष्टि **विसय-चागो**-विषयों का त्याग **य**-और **उहय-बोही**-व्यवहार व निश्चय रत्नत्रय **वि**-भी दुर्लभ है।

दीर्घ संसारी

अविज्जाइ चित्तं जो, दुज्झाणेण किलेसजुदं कुणदे।
भव-तण-भोयासत्तो, मिच्छजुदो दिग्घ-संसारी।।70।।

अन्वयार्थ-जो-जो **अविज्जाइ**-अविद्या से **चित्तं**-चित्त को **दुज्झाणेण**-दुर्ध्यान व **किलेसजुदं**-संक्लेशयुक्त **कुणदे**-करता है **भव-तण-भोयासत्तो**-संसार, शरीर, भोगों में आसक्त है **मिच्छजुदो**-मिथ्यात्व से युक्त (वह जीव) **दिग्घ-संसारी**-दीर्घ संसारी है।

भोग भववर्द्धक

पंचिंदियाण विसया, भुंजिज्जंति अण्णाणि जीवेहिं।
तमुज्झेज्ज सण्णाणी, जं ते भववड्ढगा णियमा।71।।

अन्वयार्थ-अण्णाणि-जीवेहिं-अज्ञानि जीवों के द्वारा **पंचिंदियाण**-पंचेन्द्रियों के **विसया**-विषय **भुंजिज्जंति**-भोगे जाते हैं **सण्णाणी**-सम्यक् ज्ञानी **तं**-उनको **उज्झेज्ज**-छोड़ देता है **जं**-क्योंकि **ते**-वे **णियमा**-नियम से **भववड्ढगा**-भववर्द्धक होते हैं।

स्वानुभूति व विरक्ति

जह जह सगाणुभूदी, होज्ज विरत्ती तह तह विसयादो।
जह जह होज्ज भवादो, तह तह सगाणुभूदी खलु य।।72।।

अन्वयार्थ-खलु-निश्चय से **जह-जह**-जैसे-जैसे **सगाणुभूदी**-स्वानुभूति **होज्ज**-होती है **तह तह**-वैसे-वैसे **विसयादो**-विषयों से **विरत्ती**-विरक्ति होती है **य**-और **जह-जह**-जैसे-जैसे **भवादो**-संसार से **होज्ज**-विरक्ति होती है **तह-तह**-वैसे-वैसे **सगाणुभूदी**-स्वानुभूति होती है।

क्षान्त व अनघ

जो जिणगुणाणुरत्तो, विसयविरत्तो खमादिधम्मजुदो।
संजय-तव-जुत्तो सो, कसाय-समणो पाव-हीणो।।73।।

अन्वयार्थ-जो-जो **जिणगुणाणुरत्तो**-जिनेन्द्र भगवान् के गुणों में अनुरक्त **विसय-विरत्तो**-विषयों से विरक्त **खमादि-धम्मजुदो**-क्षमादि धर्म से युक्त **संजम-तव-जुत्तो**-संयम व तप से युक्त है **सो**-वह **कसाय-समणो**-कषायों का शमन करने वाला और **पावहीणो**-पापों से हीन है।

निजात्म विहार

इंदजालोव्व भवम्मि, णाणी कहं रज्जदे पोग्गलेसु।
एयंते ठादूणं, णाणी विहरदि णियप्पम्मि हु।।74।।

अन्वयार्थ-इंदजालोव्व भवम्मि-इंद्रजाल के समान संसार में **पोग्गलेसु**-पुद्गलों में **णाणी**-ज्ञानी **कहं**-कैसे **रज्जदे**-रंजायमान हो सकता है वह **णाणी**-ज्ञानी तो **हु**-निश्चय से **एयंते**-एकांत में **ठादूणं**-स्थित होकर **णियप्पम्मि**-निज आत्मा में **विहरदि**-विचरण करता है।

आत्मलीन योगी

सुद्धप्पे संलीणो, अणुभवदे सिद्धोव्व हु जदि जोगी।
ता सोसदि भवणीरं, पस्सेदि मुत्ति-सुंदरिं सो।।75।।

अन्वयार्थ-जदि-यदि **सुद्धप्पे**-शुद्धात्मा में **संलीणो**-संलीन **जोगी**-योगी **सिद्धोव्व**-सिद्धों के समान **अणुभवदे**-अनुभव करता है **ता**-तो **सो**-वह **हु**-निश्चय से **भवणीरं**-संसार रूपी जल को **सोसदि**-सुखा देता है व **मुत्ति-सुंदरिं**-मुक्ति सुंदरी को **पस्सेदि**-देखता है।

पात्रदानफल

उत्तम-पत्ताण देदि, उत्तम-वत्थूणि वरविहीए जो।
खवदि पावं सो लहदि, उत्तम-ठाणं लोयसिहरे।।76।।

अन्वयार्थ-**जो**-जो **उत्तम-पत्ताण**-उत्तम पात्रों को **वर-विहीए**-उत्तम विधि से **उत्तम-वत्थूणि**-उत्तम वस्तुओं को **देदि**-देता है **सो**-वह **पावं**-पाप **खवदि**-क्षय करता है तथा **लोयसिहरे**-लोक के शिखर पर **उत्तम-ठाणं**-उत्तम स्थान को **लहदि**-प्राप्त करता है।

पंडित कौन ?

जो अप्पा जाणदे हु, देहादो भिण्णं सस्सद-मप्पं।
जाणदि जिणोव्व अप्पं, पंडिदो सुद्धप्पाणुभवी।।77।।

अन्वयार्थ-**हु**-निश्चय से **जो**-जो **अप्पा**-आत्मा **देहादो**-देह से **भिण्णं**-भिन्न **सस्सदं**-शाश्वत **अप्पं**-आत्मा को **जाणदे**-जानता है वह **जिणोव्व**-जिनेन्द्र भगवान् के समान **अप्पं**-आत्मा को **जाणदि**-जानता है (वह ही) **सुद्धप्पाणुभवी**-शुद्धात्मानुभवी **पंडिदो**-पंडित है।

आभूषण

णर-भूसणं च रूवं, सयायारो रूवस्स भूसणं च।
तस्स भूसणं णाणं, खमाइ-धम्मो णाणस्स खलु।।78।।

अन्वयार्थ-**णर-भूसणं**-मनुष्य का आभूषण **रूवं**-रूप है **च**-और **रूवस्स**-रूप का **भूसणं**-आभूषण **सयायारो**-सदाचार है **तस्स**-उसका (सदाचार का) **भूसणं**-आभूषण **णाणं**-ज्ञान है **च**-और **खलु**-निश्चय से **णाणस्स**-ज्ञान का आभूषण **खमाइ-धम्मो**-क्षमादि धर्म है।

नरक द्वार

छव्विहं णिरयदारं, भय-कवड-काम-कोह-मोह-लोहा।
अप्पसुहाकंखी खलु, उज्झंतु सव्व-पाव-मूला।।79।।

अन्वयार्थ-**णिरयदारं**-नरक के द्वार **छव्विहं**-छः प्रकार के हैं **भय-कवड-काम-कोह-मोह-लोहा**-भय, कपट, काम, क्रोध, मोह व लोभ **अप्पसुहाकंखी**-आत्म सुख के आकांक्षी **खलु**-निश्चय से **सव्व-पाव-मूला**-सभी पाप की जड़ों का **उज्झंतु**-त्याग करें।

आत्मानुभव किसको ?

पियो एगंत-वासो, सक्को जाणिदुं अणेगंतं सो।
कत्थ वि वसेज्ज साहू, अप्पमणुभवेदुं समत्थो।।80।।

अन्वयार्थ-(जिसे) **एगंत-वासो**-एकांतवास **पियो**-प्रिय है **सो**-वह **अणेगंतं**-अनेकांत को **जाणिदुं**-जानने में **सक्को**-समर्थ है **साहू**-साधु **कत्थ वि**-कहीं भी **वसेज्ज**-रहे वह **अप्पं**-आत्मा की **अणुभवेदुं**-अनुभूति करने में **समत्थो**-समर्थ है।

आत्मस्थिरता

असुह-पवट्टी दिस्सदि, कयाइं देहवयणाणं तहावि।
थिरो होदि जो अप्पे, ण लिंपदि कया सो पावेहि।।81।।

अन्वयार्थ-**जो**-जो **अप्पे**-आत्मा में **थिरो**-स्थिर **होदि**-होता है (यदि उसकी) **कयाइं**-कदाचित् **देहवयणाणं**-देह और वचनों की **असुह-पवट्टी**-अशुभ प्रवृत्ति **दिस्सदि**-दिखती भी है **तहा वि**-तथापि **सो**-वह **कया**-कभी **पावेहि**-पापों से **ण लिंपदि**-लिप्त नहीं होता।

आत्मलीन सदा निर्मल

सुद्धप्पे लीणो जो, होज्ज णिम्मलं चित्तं सया तस्स।
किंचिवि सदोस-कज्जे, तस्स हु णो दूसिदं चित्तं।।82।।

अन्वयार्थ-जो-जो **सुद्धप्पे**-शुद्ध आत्मा में **लीणो**-लीन है **तस्स**-उसका **चित्तं**-चित्त **सया**-सदा **णिम्मलं**-निर्मल **होज्ज**-होता है **किंचिवि**-किंचित् भी **सदोस-कज्जे**-सदोष कार्य होने पर **तस्स**-उसका **चित्तं**-चित्त **हु**-निश्चय से **दूसिदं**-दूषित **णो**-नहीं होता।

कर्मबंधरहित-ज्ञानी

होज्ज णिम्मल-चित्तम्मि, जलरेहाव्व खणधंसी कसायो।
पोम्म-दलं गहदि णपं, णो बंधदि णाणी कम्माणि।।83।।

अन्वयार्थ-णिम्मल-चित्तम्मि-निर्मल चित्त में **कसायो**-कषाय **जलरेहाव्व**-जल रेखा के समान **खणधंसी**-क्षणध्वंसी **होज्ज**-होती है (जिस प्रकार) **पोम्म-दलं**-कमल का पत्ता **अपं**-जल **ण गहदि**-ग्रहण नहीं करता उसी प्रकार **णाणी**-ज्ञानी **कम्माणि**-कर्मों को **णो**-नहीं **बंधदि**-बाँधता है।

शुद्धात्मलीन

खादंतो वि ण खाददि, गच्छंतो सया गच्छदे जो णो।
भासंतो वि ण भासदि, हवेदि सुद्धप्प-लीणो सो।।84।।

अन्वयार्थ-जो-जो **खादंतो**-खाता हुआ **वि**-भी **ण**-नहीं **खादंदि**-खाता **सया**-सदा **गच्छंतो**-चलते हुए भी **णो**-नहीं **गच्छदे**-चलता **भासंतो**-बोलता हुआ **वि**-भी **ण**-नहीं **भासदि**-बोलता **सो**-वह **सुद्धप्प-लीणो**-शुद्धात्म लीन **हवेदि**-होता है।

विकल्पविहीन

किं कत्थ कहं तच्चं, कत्तो केसिं ठविदं तहा केण।
सुद्धोवजोगि-साहू, सव्व-वियप्प-विहीणो होदि।।85।।

अन्वयार्थ-तच्चं-तत्त्व **किं**-क्या है **कत्थ**-कहाँ है **कहं**-क्यों है **कत्तो**-किससे है **केसिं**-किसके लिए **तहा**-तथा **केण**-किसके द्वारा **ठविदं**-स्थापित है (परन्तु) **सुद्धोवजोगि-साहू**-शुद्धोपयोगी साधु **सव्व-वियप्प-विहीणो**-सर्व विकल्पों से विहीन **होदि**-होता है।

द्रव्यादि ग्राहक

जो जं दव्वं कंखदि, सो तं दव्वमेव खलु थक्कवेदि।
एगो पज्जायं तह, विदियो सुसहावं जीवस्स।।86।।

अन्वयार्थ-खलु-निश्चय से **जो**-जो **जं**-जिस **दव्वं**-द्रव्य की **कंखदि**-कांक्षा करता है **सो**-वह **तं**-उस **दव्वं**-द्रव्य को **एव**-ही **थक्कवेदि**-रखता है **एगो**-एक **पज्जायं**-पर्याय को **तह**-तथा **विदियो**-दूसरा **जीवस्स**-जीव के **सुसहावं**-सु-स्वभाव को रखता है।

जहाँ रति वहाँ प्रीति

जो वसेदि खलु जत्थ वि, करेदि सो रदिं तस्सिं खेत्तम्मि।
जम्मि जम्मि होदि रदी, तम्मि तम्मि पीदी णियमेण।।87।।

अन्वयार्थ-खलु-निश्चय से **जो**-जो **जत्थ**-जहाँ **वि**-भी **वसेदि**-रहता है **सो**-वह **तस्सिं**-उस **खेत्तम्मि**-क्षेत्र में **रदिं**-रति **करेदि**-करता है **जम्मि जम्मि**-जिस-जिसमें **रदी**-रति **होदि**-होती है **तम्मि तम्मि**-उस-उसमें **पीदी**-प्रीति **णियमेण**-नियम से होती है।

कर्म अबंधक

राय-दोस-हीणो जो, कुव्वदि ण किंचि सुहासुहवियप्पं।
णिव्वियप्प-झाणी सो, खवदि कम्मं कया बंधदि ण।।88।।

अन्वयार्थ-जो-जो **राय-दोस-हीणो**-राग-द्वेष से हीन है **किंचि**-किंचित् भी **सुहासुहवियप्पं**-शुभ-अशुभ विकल्प को **ण**-नहीं **कुव्वदि**-करता **सो**-वह **णिव्वियप्प-झाणी**-निर्विकल्प ज्ञानी **कम्मं**-कर्म **खवदि**-क्षय करता है **कया**-कभी **ण बंधदि**-बांधता नहीं।

शाश्वत सुख हेतु

अण्णं दव्वं अण्णं, सगसरूवेणं होदि सगदव्वं।
परदव्वं दुह-हेदू, सगदव्वं च सस्सदसुहस्स।।89।।

अन्वयार्थ-अण्णं-अन्य **दव्वं**-द्रव्य **अण्णं**-अन्य है और **सगदव्वं**-स्वद्रव्य **सगसरूवेणं**-स्व स्वरूप के द्वारा **होदि**-होता है **परदव्वं**-परद्रव्य **दुह-हेदू**-दुःख का हेतु है **च**-और **सगदव्वं**-स्वद्रव्य **सस्सद-सुहस्स**-शाश्वत सुख का हेतु है।

ध्यान कैसे ?

उज्झित्ता परदव्वं, मणवयणकायेहि णवकोडीए।
झायेज्जा सुद्धप्पं, लहेज्ज सुद्धप्पसहावं च।।90।।

अन्वयार्थ-मणवयणकायेहि-मन-वचन-काय **णवकोडीए**-नव कोटि के द्वारा **परदव्वं**-परद्रव्य को **उज्झित्ता**-त्यागकर **सुद्धप्पं**-शुद्धात्मा का **झायेज्जा**-ध्यान करना चाहिए **च**-और **सुद्धप्पसहावं**-शुद्धात्म स्वभाव को **लहेज्ज**-प्राप्त करना चाहिए।

रागी शाश्वत दुःखी

पोग्गलेसु णंददि जो, णियप्पगुणा हि उविक्खदे णिच्चं।
सुहं लहेज्ज कहं सो, सस्सद-दुहं पोग्गल-रायी।।91।।

अन्वयार्थ-जो-जो **पोग्गलेसु**-पुद्गलों में **णंददि**-आनंदित होता है **णिच्चं**-नित्य **णियप्पगुणा**-निज आत्म गुणों की **उविक्खदे**-उपेक्षा करता है **सो**-वह **सुहं**-सुख **कहं**-कैसे **लहेज्ज**-प्राप्त कर सकता है **पोग्गल-रायी**-पुद्गल रागी **सस्सद-दुहं**-शाश्वत दुःख **हि**-ही (प्राप्त करता है)।

आत्मानंद

अप्पाणंदो डहदे, संसार-वड्ढगं पाव-संचयं।
पसरदि अप्पपयासं, सस्सद-सुह-सिद्धि-कारणं च।।92।।

अन्वयार्थ-अप्पाणंदो-आत्मा का आनंद **संसार-वड्ढगं**-संसार वर्द्धक **पाव-संचयं**-पाप समूह को **डहदे**-जलाता है **अप्पपयासं**-आत्म प्रकाश का **पसरदि**-प्रसार करता है **च**-और (वह आत्मानंद) **सस्सद-सुह-सिद्धि-कारणं**-शाश्वत सुख सिद्धि का कारण है।

शुद्धात्म ध्यान का फल

तुट्ठिं णियप्पसंतिं, सुइं च चिम्मयरूवप्पाणंदं।
संवर-णिज्जर-हेदुं, सुद्धप्पझाणेण लहदि सो।।93।।

अन्वयार्थ-सुद्धप्पझाणेण-शुद्धात्म ध्यान से **सो**-वह (योगी) **संवर-णिज्जर-हेदुं**-संवर-निर्जरा के हेतु **णियप्पसंतिं**-निज आत्म शान्ति **तुट्ठिं**-तुष्टि **सुइं**-पवित्रता **च**-और **चिम्मयरूवप्पाणंदं**-चिन्मय रूप आत्मानंद को **लहदि**-प्राप्त करता है।

भव्य द्वारा करणीय

णियसेयत्थी भव्वो, पुच्छेदु खलु अप्पसुद्धसरूवं।
तमेव सया झायेदु, तं पेक्खेज्जा सगचित्तम्मि।।94।।

अन्वयार्थ-णियसेयत्थी-निज कल्याण के इच्छुक **भव्वो**-भव्य जीव **अप्पसुद्धसरूवं**-आत्मा के शुद्ध स्वरूप को **पुच्छेदु**-पूछे **खलु**-निश्चय से **तमेव**-उसे ही **सया**-सदा **झायेदु**-ध्यायें **तं**-उसे ही **सगचित्तम्मि**-अपने चित्त में **पेक्खेज्जा**-देखें।

द्रव्य स्वभाव

जीवाइ-सव्वदव्वं, णियमेणं णो होदि अण्णरूवं।
सग-चउक्केण जुत्तं, णो विजहदि सभावं दव्वं।।95।।

अन्वयार्थ-जीवाइ-सव्वदव्वं-जीवादि सभी द्रव्य **णियमेणं**-नियम से **अण्णरूवं**-अन्य रूप **णो**-नहीं **होदि**-होते **सग-चउक्केण**-स्वचतुष्क से **जुत्तं**-युक्त **दव्वं**-द्रव्य **सभावं**-स्वभाव को **णो**-नहीं **विजहदि**-छोड़ते।

रत्नत्रय

सगवर-मंगलत्थं हु, सम्मत्त-णाण-चरियावसियाणि य।
विणा रयणत्तयेणं, ण पुण्णं भव-सिव-सुहं णेव।।96।।

अन्वयार्थ-सगवर-मंगलत्थं-स्व-पर मंगल के लिए **सम्मत्त-णाण-चरियाणि य**-सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र **आवसियाणि**-आवश्यक हैं **हु**-निश्चय से **रयणत्तयेणं**-रत्नत्रय के **विणा**-बिना **ण**-न **पुण्णं**-पुण्य है और **णेव**-ना ही **भव-सिव-सुहं**-संसार व मोक्ष का सुख।

अभिवादन

जो को वि भव्वो जहा जोग्गमभिवाददे धम्मी पडि सो।
सुजणेहि होज्ज पुज्जो, अभिवादणं णिप्फलं णेव।।97।।

अन्वयार्थ-**जो**-जो **को**-कोई **वि**-भी **भव्वो**-भव्य जीव **धम्मी पडि**-धर्मियों के प्रति **जहाजोग्गं**-यथायोग्य **अभिवाददे**-अभिवादन करता है **सो**-वह **सुजणेहि**-सज्जनों के द्वारा **पुज्जो**-पूज्य **होज्ज**-होता है **अभिवादणं**-अभिवादन कभी **णेव णिप्फलं**-निष्फल नहीं होता।

अभिवादन कैसे ?

णमोत्थु पंच-गुरुं पडि, वंदामि खलु अज्जिगा पडि णिच्चं।
उक्किट्ठ-सावया पडि, इच्छामि वदेज्ज भत्तीए।।98।।
वदित्तु वंदणं सया, भव-विरत्त-देसवदि-सावयं-पडि।
जहाजोग्गमभिवाददु, परोप्परे तह जय-जिणिंदं।।99।।

अन्वयार्थ-सद्गृहस्थ को **णिच्चं**-नित्य **भत्तीए**-भक्तिपूर्वक **पंच-गुरुं पडि**-पंच गुरुओं के प्रति **णमोत्थु**-नमोस्तु **अज्जिगापडि**-आर्यिकाओं के प्रति **वंदामि**-वंदामि **य**-और **उक्किट्ठ-सावया पडि**-उत्कृष्ट श्रावकों के प्रति **इच्छामि**-इच्छामि (इस प्रकार) **वदेज्ज**-कहना चाहिए। **भव-विरत्त-देसवदि-सावयं पडि**-संसार से विरक्त देशव्रती श्रावक के प्रति **सया**-सदा **वंदणं**-वंदना **तह**-तथा **परोप्परे**-परस्पर में **जय-जिणिंदं**-जय-जिनेंद्र **वदित्तु**-कहकर **जहाजोग्गं**-यथायोग्य **अभिवाददु**-अभिवादन करना चाहिए।

अभिवादन भी पूजा

सिद्धा होहीअ जे वि, पुव्वे कुणिदा अभिवादणं तेहि।
अभिवादणं वि पूया, अप्प-सुइ-कारणं-कमेणं।।100।।

अन्वयार्थ-अभिवादणं-अभिवादन **वि**-भी **पूया**-पूजा है वह **कमेणं**-क्रम से **अप्प-सुइ-कारणं**-आत्मा की पवित्रता का कारण है **जे**-जो **वि**-भी **सिद्धा**-सिद्ध **होहीअ**-हुए हैं **तेहि**-उनके द्वारा **पुव्वे**-पूर्व में **अभिवादणं**-अभिवादन **कुणिदा**-किया गया है।

समीचीन कार्य से ही मंगल

कंखेदि सग-मंगलं, जीवो कुव्वेदि कज्जाणि हि तस्स।
केरिसं मंगल-सुहं, कहं च सम्मकज्जेण विणा।।101।।

अन्वयार्थ-जीवो-प्रत्येक जीव **सग-मंगलं**-अपने मंगल की **कंखेदि**-आकांक्षा करता है **च**-और **तस्स**-उसके लिए **हि**-ही **कज्जाणि**-कार्य **कुव्वेदि**-करता है **सम्मकज्जेण**-समीचीन कार्य के **विणा**-बिना **कहं**-कैसा **सुहं**-सुख और **केरिसं**-किस प्रकार का **मंगलं**-मंगल।

अभ्यास किसका ?

सग-सुद्धप्प-चिंतणं, परिसह-जयं तहा अब्भसेदि जो।
सो अह-खयिदुं सक्को, अब्भसेज्ज तुमं अवि तत्तो।।102।।

अन्वयार्थ-जो-जो **सग-सुद्धप्प-चिंतणं**-निज शुद्ध आत्मा के चिंतन का **तहा**-तथा **परिसह-जयं**-परिषह जय का **अब्भसेदि**-अभ्यास करता है **सो**-वह **अह-खयिदुं**-पापों का क्षय करने में **सक्को**-समर्थ है **तत्तो**-इसीलिए **तुमं**-तुम्हें **अवि**-भी **अब्भसेज्ज**-अभ्यास करना चाहिए।

तत्त्वज्ञानी का सामर्थ्य

अग्गी डहदि इंधणं, अक्क-किरणं सोसदि तडाग-जलं।
विरागो तच्चणाणी, वियार-अघ-णासिदुं सक्को।।103।।

अन्वयार्थ-जिस प्रकार **अग्गी**-अग्नि **इंधणं**-ईंधन को **डहदि**-जलाती है **अक्क-किरणं**-सूर्य की किरण **तडाग-जलं**-सरोवर के जल को **सोसदि**-सुखा देती है (उसी प्रकार) **विरागो**-वैरागी **तच्चणाणी**-तत्त्व ज्ञानी **वियार-अघ-णासिदुं**-विकार व पापों का नाश करने में **सक्को**-समर्थ है।

तीर्थंकर पद योग्य

अच्चंत-दया-जुत्तो, भव्वो कुणदि सम्मत्त-सुद्धिं जो।
सण्णाणस्सज्झयणं, गहदि संजम-मप्पसुद्धीइ।।104।।
सुद्ध-भाव-संजुत्तो, होदि समत्थो सवर-कल्लाणाय।
सो हु धम्म-पवट्टगो, सक्को होदुं सिद्धिं लहदि।।105।।

अन्वयार्थ-**अच्चंत-दया-जुत्तो**-अत्यंत दया से युक्त **जो**-जो **भव्वो**-भव्य जीव **सम्मत्त-सुद्धिं**-सम्यक्त्व की शुद्धि **सण्णाणस्स**-सम्यक्-ज्ञान का **अज्झयणं**-अध्ययन **कुणदि**-करता है व **अप्पसुद्धीइ**-आत्मशुद्धि के लिए **संजमं**-संयम **गहदि**-ग्रहण करता है **सुद्ध-भाव-संजुत्तो**-शुद्ध भाव से संयुक्त **सो**-वह भव्य **हु**-निश्चय से **सवर-कल्लाणाय**-स्व-पर कल्याण के लिए **समत्थो**-समर्थ **होदि**-होता है **धम्म-पवट्टगो**-धर्म प्रवर्तक अर्थात् तीर्थंकर **होदुं**-होने में **सक्को**-समर्थ वह पुनः **सिद्धिं**-सिद्धि को **लहदि**-प्राप्त करता है।

ग्रंथकार की लघुता

सवर-हिद-भावणाए, मंगलसुत्तं रइयमप्पधीए।
गहणीयं तच्चं जं, किंचिवि तं गुरुकिवा जाणह।।106।।

अन्वयार्थ-अप्पधीए-अल्पबुद्धि के द्वारा **सवरहिद-भावणाए**-स्व-पर हित की भावना से **मंगलसुत्तं**-मंगलसूत्र नामक ग्रंथ **रइयं**-रचा गया इसमें **जं**-जो **किंचिवि**-कुछ भी **गहणीयं**-ग्रहण करने योग्य **तच्चं**-तत्त्व है **तं**-वह **गुरुकिवा**-गुरु की कृपा ही **जाणह**-जानो।

अंतिम मंगलाचरण

उसहाइ-वीरंतं च, उसहसेणाइ-गणहरा सया हं।
अणंतवीराइ सव्व-केवलिणो णमामि भत्तीइ।।107।।

अन्वयार्थ-उसहाइ-वीरंतं-श्री ऋषभदेव से आदि लेकर महावीर प्रभु तक **उसहसेणाइ-गणहरा**-श्री वृषभसेन आदि गणधर **च**-और **अणंतवीराइ-सव्व-केवलिणो**-अनंतवीर्य आदि सभी केवलियों को **हं**-मैं **सया**-सदा **भत्तीए**-भक्ति से **णमामि**-नमस्कार करता हूँ।

सव्व-सूरि-पाठग-मुणि-जिण-जिणालयाणि पंचमयालस्स।
णिच्च-जिणधम्म-वयणं, वंदित्ता धरामि चित्तम्मि।।108।।

अन्वयार्थ-पंचमयालस्स-पंचम काल के **सव्व-सूरि-पाठग-मुणि-जिण-जिणालयाणि**-सभी आचार्य, उपाध्याय, मुनि, जिन, जिनालय **णिच्च-जिणधम्म-वयणं**-नित्य शाश्वत जिनधर्म व जिनवचनों की **वंदित्ता**-वंदना करके उन्हें **चित्तम्मि**-अपने चित्त में **धरामि**-धारण करता हूँ।

संति-पाय-जयकित्तिं, सूरिं महाभूसणं भारदस्स।
देसभूसण-मुणिंदं, गुरुणो गुरुं णमंसामि हं।।109।।

अन्वयार्थ-सूरिं-आचार्य श्री **संति-पाय-जयकित्तिं**-शांतिसागर जी, आचार्य श्री पायसागर जी, आचार्य श्री जयकीर्ति जी **भारदस्स**-भारत देश के **महाभूसणं**-महा आभूषण रूप **गुरुणो**-गुरु के **गुरुं**-गुरु **देसभूसण-मुणिंदं**-आचार्य श्री देशभूषण मुनीन्द्र को **हं**-मैं (आचार्य वसुनंदी) **णमंसामि**-नमस्कार करता हूँ।

जिणोव्व रट्ठ-संतं च, सिद्धंत-चक्किं महामुणिरायं।
सुद्धप्प-णंद-भोगिं, सूरि-विज्जाणंदं वंदे।।110।।

अन्वयार्थ-सुद्धप्प-णंद-भोगिं-शुद्धात्मानंद के भोगी **च**-और **जिणोव्व रट्ठ-संतं**-जिनेन्द्र भगवान् के समान राष्ट्र संत **सिद्धंत-चक्किं**-सिद्धांत चक्रवर्ती **महामुणिरायं**-महामुनिराज **सूरि-विज्जाणंदं**-आचार्य श्री विद्यानंद गुरुदेव की **वंदे**-वंदना करता हूँ।

प्रशस्ति

अंतिमणुबद्ध-केवलि-सिरि-जंबुसामि-तवठाणम्मि तहा।
विमल-विसुद्ध-भावेहि, इदं मंगलसुत्तं पुण्णं।।111।।

अन्वयार्थ-अंतिमणुबद्ध-केवलि-सिरि-जंबुसामि-तवठाणम्मि-अंतिम अनुबद्ध केवली श्री जंबूस्वामी तपस्थली पर **विमल-विसुद्ध-भावेहि-तहा**-निर्मल तथा विशुद्ध भावों से **इदं**-यह **मंगलसुत्तं**-मंगलसूत्र ग्रंथ **पुण्णं**-पूर्ण हुआ।